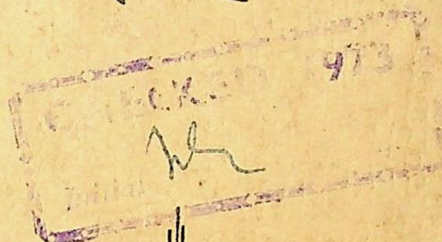
ॐ

यज्ञ-रहस्य



 बुद्धदेव विद्यालङ्कार

...िराम भल्ला की ओर से संवत् १९९५ में होशियारपुर में होने वाले यज्ञ के प्रसादरूप में भेंट ।







ओ३म्

यज्ञ रहस्य

यज्ञ की हमारे देश में बड़ी महिमा है। किन्तु वह महिमा तभी तक सच्ची है जब तक उसके मर्म्म को जान कर उससे लाभ उठाया जावे। इससे पहले कि मैं यज्ञ की विशेष व्याख्या करूँ इस शब्द का अर्थ बताना आवश्यक है। यज्ञ शब्द यज् धातु से बना है। यज् धातु के तीन अर्थ हैं:—

[१] देव पूजा [२] सङ्गतीकरण [३] दान।

वस्तुत: देखा जाय तो सङ्गतीकरण अर्थात् मिलाना ही यज्ञ का अर्थ है। मिलने के लिए कम से कम दो मिलने वाले होने चाहिए। जब दो मिलने वाले परस्पर मिलेंगे तो उनमें यही व्यवहार होगा कि एक कुछ देगा और दूसरा लेगा। लेने वाला देने वाले की पूजा करेगा और देने वाला देने के कारण देव कहलायेगा (देवोदानात्) सो यह देवपूजा और दान ही परस्पर का व्यवहार है जिसके कारण सङ्गतीकरण अथवा सङ्गठन होता है। अब देने वाले देव की भावना देते समय जितनी स्वार्थ रहित होगी उतनी ही पूजा भी सच्चे हृदय से होगी। इसलिए सङ्गतीकरण भी उतना ही गहरा और चिरस्थायी होगा। इसीलिए

यज्ञ में वारंवार 'इदन्न मम' यह मेरा नहीं है । यह शब्द दोहराये जाते हैं ।

यज्ञ और यज्ञ–नाटक

वस्तुतः देखा जाय तो अग्निहोत्र, पौर्णमास, अश्वमेधादि यज्ञ यज्ञ नहीं यज्ञ-नाटक हैं। यद्यपि इनमें घृत, अग्नि, सामग्री, समिधा आदि का सङ्गतीकरण है इसलिए यह भी यज्ञ हैं किन्तु यह समिधा, घृत, अग्नि, जलादि पदार्थ इसलिए इकट्ठे किये जाते हैं कि इनके द्वारा गुरु-शिष्य, पति-पत्नी, राजा-प्रजा, ग्राहक-दूकानदार, स्वामी-सेवक आदि को परस्पर के व्यवहार की शिक्षा दी जाय। इसीलिए गीता में कहा है—नायं लोकोऽस्त्य यज्ञस्य कुतोऽन्यः कुरुसत्तम। गीता ४–३१ अर्थात् हे अर्जुन जो यज्ञ नहीं करते उनको यही लोक प्राप्त नहीं होता तो परलोक क्या प्राप्त होगा। इससे स्पष्ट है कि यज्ञ का मुख्य सम्बन्ध इस लोक से है। इन यज्ञ नाटकों में जो मन्त्र पढ़े जाते हैं उनमें असली यज्ञ के उपदेश भरे रहते हैं।

यजमान

जब भी दो-चार, दस-बीस अथवा इससे अधिक मनुष्य परस्पर मिल कर कोई सङ्गठित कार्य्य करने की इच्छा करते हैं तो यह आवश्यक है कि वे अपने में से किसी को मुख्य कार्य्यकर्त्ता बना कर उसके कहने में चलें, उसके सङ्कल्प की पूर्ति करें, बस इस मुख्य कार्य्यकर्त्ता को ही यज्ञ में यजमान कहा जाता है।

अग्नि

अग्नि के लिये वेद में कहा है आकूत्यै प्रयुजेऽग्नये स्वाहा (यजु० ४-७) अर्थात् महान् उद्देश्य के लिये प्रबलवेग से धक्का देने वाले, आगे बढ़ने के लिए प्रेरणा करने वाले दृढ़ सङ्कल्प का नाम अग्नि है और वह प्रशंसनीय है। बस यही यज्ञ में अग्नि है।

आचमन

जिस प्रकार आग्नि प्रकाश और गर्म्मी का प्रतिनिधि है इसी प्रकार जल शान्ति और पवित्रता का प्रतिनिधि है। मनुष्य का धर्म्म है कि हर एक महान् कार्य्य को आरम्भ करने से पहिले और अपने साथियों को उसमें सहयोग देने के लिए निमन्त्रित करने से पहिले उस सङ्कल्प पर शान्त चित्त होकर विचार करे और यदि उसमें कोई थोड़ी सी भी अपवित्रता हो तो उसे निकाल कर बाहर कर दे, यही आचमन क्रिया का तात्पर्य्य है।

आचमन के ३ मंत्र

ओ३म् अमृतोपस्तरणमसि स्वाहा।

ओ३म् अमृतपिधानमसि स्वाहा।

ओ३म् सत्यं यशः श्रीर्मयिश्रीः श्रयताम् स्वाहा।

इनका सीधा अर्थ यह है कि प्रथम आचमन अमृत का उपस्तरण अर्थात् बिछौना है।

दूसरा आचमन अमृत का अपिधान अर्थात् ओढ़ना है।

तीसरे आचमन में अमृत का रूप दिखाया है अर्थात् सत्य यश और श्री यह तीन अमृत हैं इनमें से कोई एक मेरे हृदय में इस ओढ़ने और बिछौने के बीच शयन करे। सत्य ब्राह्मण का अमृत है। ब्राह्मण का प्रण है कि मैं अपनी जान देकर भी सत्य को न मरने दूँ वह अमृत रहे इसलिए सत्य ब्राह्मण का अमृत है।

क्षत्रिय का प्रण है कि मैं प्राण देकर भी यश की रक्षा करूँ। मुझ पर यह कलङ्क कभी न आने पाए कि मैंने न्याय की रक्षा नहीं की। क्षत्रिय का धर्म केवल न्याय करना नहीं किन्तु प्रजा को यह विश्वास दिलाना कि वह न्याय कर रहा है यह भी उसका धर्म है। इसलिए यश उसका अमृत है।

श्री शब्द श्रिश्रये धातु से बना है। श्रिश्रये का अर्थ है आश्रय देना। जिस मनुष्य के पास एकलक्ष रुपया भी हो किन्तु उसने कभी किसी पुण्य कार्य को आश्रय न दिया हो तो वह धनपति कहला सकता है श्रीपति नहीं। श्री तो उसी धन का नाम है जिसके द्वारा किसी पुण्य कार्य को आश्रय दिया जाय। यह श्री वैश्य का अमृत है। वैश्य अपने प्राण देकर भी इस श्री को नहीं मरने देता।

अब इन तीनों का सत्य, यश और श्री का ओढ़ना और बिछौना प्राप्ति मार्ग और प्रयोग मार्ग दोनों ही पवित्र हों और शान्ति से युक्त हों यही आचमन क्रिया का तात्पर्य्य है। जब एक प्रण कर लिया फिर तो उसे निभाना ही चाहिए। किन्तु प्रण करने से पहले खूब ठंडे दिल से विचार लेना चाहिए जिससे पीछे पछताना न पड़े।

समिधा

यजमान के सहयोगी कार्य्यकर्त्ता समिधा कहलाते हैं। उनका कर्त्तव्य है कि अपने आपको आहुति करके भी अग्नि की रक्षा करें। इस लिए सबसे पहली समिधा यजमान अपने आप को बनाता है। वह कहता है अयम् त इदध्म आत्मा जात वेदः हे अग्नि तेरे लिए सबसे पहला इन्धन अयम् आत्मा, यह यजमान अपने आप है। जहाँ कठिन समय आने पर लोग दूसरों से कहते हैं कि तुम आगे बढ़ो और आप चुप चाप पीछे छिप कर बैठ जाते हैं वे यज्ञ सफल नहीं होते। जो यजमान यज्ञ में सबसे पहले अपने आपको आहुति करने को तैय्यार रहते हैं उनकी अग्नि सदा अमर रहती है।

ऋत्विज्

ऋतु उस समय को कहते हैं जो किसी कार्य्यकर्त्ता ने अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिए किसी एक विशेष कार्य्य के लिए नियत किया हो। उदाहरण के लिए, चावल पकाने में—धान कूटना, धोना, आग जलाना, पानी रखना और पकाना यह पाँच अङ्ग हैं सो इन पाँच कार्य्यों के लिए नियत समय को चावल पकाने की पाँच ऋतु कहेंगे। ऋत्विज् उस मनुष्य को कहते हैं जो अन्धा-धुन्ध कार्य्य न करके अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिए पहले ठीक ठीक समय विभाग बना कर फिर उसका पूर्ण रूप से पालन करे। अँग्रेज़ी भाषा में ऐसे मनुष्य को Punctual कहते हैं

किन्तु Punctual में समय विभाग के बनाने का भाव इतना विशेष रूपेण नहीं है जितना समय पालन का भाव है। ऋत्विज् में दोनों भाव स्पष्ट दीखते हैं। इसीलिए यह शब्द अति सुन्दर है।

चार ऋत्विज्

यों तो बड़े यज्ञों में ऋत्विजों की संख्या १६ तक पहुँच जाती है किन्तु साधारण यज्ञों में चार ऋत्विज् होते हैं। इनके नाम—होता, अपवर्य्यु, उप्गाता और ब्रह्मा यह चार होते हैं।

छः आसन

भगवान् पतञ्जलि ने कहा है, एकः शब्दः सम्यग्ज्ञातः सुप्रयुक्तः स्वर्गेलोके काम धुग्मवति। अर्थात् वेदवाणी की महिमा अपार है उसके एक शब्द को भी ठीक ठीक जानकर उसे यदि भली प्रकार प्रयोग में ले आवें तो वह एक शब्द ही कामधेनु हो जाता है। सो यदि हम यज्ञ विद्या की ओर ध्यान दें तो यह बात बिलकुल यथार्थ प्रतीत होती है। आप यज्ञशाला में प्रवेश कीजिये आपको छः आसन मिलेंगे पूर्वाभिमुख यजमान का आसन है उनके साथ ही होता का आसन है। दाहिनी ओर यजमान की पत्नी है और उस ओर ही ब्रह्मा जी का आसन है यजमान के सामने उद्गाता तथा बांई ओर अपवर्य्यु है। यह छः आसन यज्ञशाला में बिछे हैं। देखने में अतिसाधारण सी बात है। किन्तु यदि हम इन छः आसनों का मर्म्म जान लें तो वर्तमान युग में पूंजीपति और श्रमजीवियों के जितने कलह देखने

में आते हैं सब दूर हो जावें। यही नहीं जब कभी किसी सङ्गठित कार्य्य करने वाले को अपने उद्देश्य की पूर्ति में बाधा उपस्थित हो तब वह झट पट इस बात का पता लगा सकता है कि मुझे सफलता क्यों नहीं हुई। क्यों कि उसको सफलता क्यों नहीं हुई इसका उत्तर इन छहों आसनों में से कोई न कोई अवश्य देगा।

आइये इन छहों आसनों पर बैठकर कौन क्या करते हैं इसको जानें। सब से पहले यजमान को लीजिए यजमान का आसन सङ्कल्प का आसन है। इस आसन पर बैठ कर यजमान सङ्कल्प करता है कि इस तिथि इस दिन इस समय अमुक लोक हितकारी उद्देश्य की पूर्ति के लिए मैं अमुक यज्ञ करूँगा। इस क्रिया की क्या महिमा है सब से प्रथम इसको ही देखना चाहिए और फिर उस कसौटी पर अपने जीवन को कस कर देखना चाहिए। आप एक बड़ी दूकान के मालिक हैं २० कर्मचारी आपकी इस दूकान पर काम करते हैं। आप यजमान हैं वे आपके कार्य्य-कर्त्ता यह एक छोटा सा यज्ञ है।

जिसमें से ५०० रुपया मासिक आप को बचता है। यह ५०० रुपया आप क्यों बचाते हैं। आप अभी इस बचत को एक हज़ार तक पहुँचाना चाहते हैं पर मैं आप से पूछता हूँ क्यों? मैं ही नहीं आपके कर्मचारी भी पूछते हैं आप झुंझला कर कहते हैं तुम अपने पैसे लो और अपना काम करो तुम्हें इससे क्या मतलब। यह इतना रूखा जवाब आप इस लिए देते हैं कि आप सङ्कल्प की महिमा नहीं जानते। अब आइये कुछ और दृश्य देखिये।

यह कुछ सरदारों के साथ जङ्गल में कौन बैठे हैं ? यह राणा प्रताप हैं। आज इस वन में हैं तो कल उसमें, आज इस घाटी पर हैं तो कल उस पर, राज्य छोड़कर वनवन और झाड़ी झाड़ी की ओर छिपे भाग रहे हैं। इनके साथी सरदारों का भी यही हाल है। भूख प्यास, आँधी पानी और ऊपर से शत्रु सब ही इनको सताते हैं परन्तु फिर भी सब के चेहरे चमक रहे हैं। वह चमक किसकी है ? स्वाधीनता की रक्षा के पवित्र सङ्कल्प की। इन्होंने अपने सरदारों से यह नहीं कहा था कि तुम्हें इससे क्या मतलब ? यह कौन हैं ? यह दो सौ जङ्गली मावलोंकी छोटीसी टुकड़ी के बीच भविष्यकाल के छत्रपति शिवाजी खड़े हैं। आपकी दूकान के कर्मचारी पारितोषिक मिलने पर भी प्रसन्न नहीं होते दूसरी ओर इन्हें सहस्र भुजाओं में मृत्यु ही मृत्यु लिए भीषण मुग़ल साम्राज्य सामने खड़ा डरा रहा है। और यह अनपढ़ जङ्गली हँस रहे हैं। क्यों ? इसलिए कि इस यज्ञ के यजमान ने अपना धर्म रक्षा का पवित्र सङ्कल्प इन्हें बता दिया है।

यह सामने कौन है ? यह मुट्ठी भर हड्डियों का ढेर गांधी है। भला इसकी ओर देखिये। सङ्कल्प छिपाना तो दूर रहा यह तो पहले से ही चिल्ला कर कह रहा है भाइयो जेल चलना है चलोगे ? और यह ७० सहस्र नरनारी किस उत्साह से कह रहे हैं "क्यों नहीं चलेंगे ?" आप के कर्मचारी पारितोषिक के लोभ से भी दूकान में एक घण्टा बिजली के पंखे के नीचे भी और अधिक बैठने को तैय्यार नहीं और इस गांधी के साथ जेल की कोठरियों

में सड़ने को तैयार हैं। क्यों ? उसी देश की स्वतन्त्रता के सङ्कल्प के बल से।

हे पूँजीपतियो ! क्या अब भी तुमने संकल्प की महिमा को नहीं समझा। यदि कमाने से पहले तुमने राष्ट्र की सेवा का कोई पवित्र संकल्प किया होता, यदि तुम्हारी कमाई का मुख्य भाग उस संकल्प की पूर्ति में लगाता तो तुम्हारे कर्मचारियों को तुम्हारा ऐश्वर्य्य, तुम्हारा महल और तुम्हारी मोटर भी न अखरती। उन्हें तुम उनकी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए पर्य्याप्त वेतन भी दे देते तो कदाचित् वह पारितोषिक भी न मांगते। किन्तु तुम्हारा यज्ञ तो सङ्कल्प हीन है। जो भाग तुम्हें उनको देना था और जो सङ्कल्प रूप अग्नि को देना था उन दोनों में से चोरी, भयंकर चोरी करके तुम अपनी कामाग्नि बुझाते हो इसलिए उनकी क्रोधाग्नि भड़कती है।

घबराओ मत ! तुमने सङ्कल्प करके यज्ञ नहीं किया तो यज्ञ करके सङ्कल्प कर लो। अब तो निश्चय करो कि तुम्हारी बचत का मुख्य भाग अग्निदेव और 'विश्वेदेवा:' को मिलेगा। राष्ट्र सेवा के किसी पवित्र सङ्कल्प को और उसकी पूर्ति में सहायक कर्मचारियों और ग्राहकों को मिलेगा। वह सङ्कल्प अग्नि है और ग्राहक और कर्मचारी वर्ग 'विश्वेदेवा:' हैं। इनका भाग चुराने वाला असुर है यजमान नहीं। ऐ पूँजीपतियो और राष्ट्रपतियो सङ्कल्प की महिमा पहिचानो। यह पहला आसन है। इसी की महिमा में कहा गया है "तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु।" याद

रखना तुम्हारी बचत का मुख्य भाग अग्नि के लिए है, गौण भाग नहीं। तुम तो मुख्य क्या गौण भी नहीं देते। ज़रा सा यज्ञ का भाग देवों के ओठों पर लीप कर यजमान की पदवी पाना चाहते हो। यह ढोंग न चलेगा। मन को बदलो मन को। सङ्कल्प की महिमा पहिचानो।

यह दूसरा आसन होता का आसन है। यह एक विचित्र जीव हैं। दिन रात ठोड़ी पकड़ कर कुछ सोचा करते हैं। यह भविष्य काल के देवता हैं। इनसे जब पूछिये तो यही कहेंगे यहाँ हमारे कारख़ाने में एञ्जिन घर होगा, यहाँ जो श्रमजीवियों के मकान बनेंगे उसमें इस स्थान पर फुलवाड़ी लगेगी, यहाँ क्रीड़ाक्षेत्र होगा और यहाँ गोशाला होगी, यह नक़्शा बड़े परिश्रम से तय्यार किया गया है, इससे पहिले जितने नक़्शे तय्यार हुए उनके अनुसार बनने वाले भवनों में जो त्रुटियाँ अनुभव से पता लगीं वह मेरे मानचित्र में न रहेंगी, मैंने जो संविधान तय्यार किया है उसमें एक एक रेखा के लिए मैं प्रमाण उपस्थित कर सकता हूँ, मैंने अंधा धुन्ध कुछ नहीं लिखा है, मेरी एक एक बात प्रमाण से पुष्ट है, और वह अवश्य सुखदायक होगी। इनका वर्णन वेद ने इस प्रकार किया है ऋचांत्वः पोषमास्ते पु पुष्वान्। यह अपनी एक एक बात की पुष्टि ऋचाओं के बल से कर के बैठे ह। यह होता जी हैं।

अब यह अध्वर्य्यु जी आते हैं, इनका काम है ध्वर अर्थात् हिंसा न होने देना। होता जी की बनाई कार्य्य प्रणाली का एक एक

अक्षर इन्हें एक एक कामधेनु के समान प्यारा है फिर भला यज्ञ में उसकी हत्या कैसे होने देंगे। कहीं होता जी की भूल देखेंगे तो फिर दौड़े उन्हीं के पास जावेंगे, उन्हीं से ठीक करावेंगे, इनका काम तो है चलना और चलाना, यह यज्ञरूपी रथ का विमान करते हैं उसे steer करते हैं, इस नाप और इस अन्दाज से चलाते हैं कि कहीं टक्कर नहीं होने पाती। अगर सोचने का, स्कीम बनाने का बोझ भी इन पर डाल दिया जाता तो इनमें इतनी फुरती नज़र न आती। सोच विचार की उलझन आई और फुरती भागी, किन्तु यह तो फुरती की मूर्ति हैं। इस पर भी इन्हें अंधे या बुद्धिहीन न समझना। होता जी के गोरखधन्धे को समझना और फुर्ती से समझना इन्हीं का काम है। इनका गुण है फुरती, सो समझने में भी फुर्तीले हैं कार्य्य करने में भी। वेद ने इनकी महिमा इस प्रकार गाई है, यज्ञस्य मात्रां विमिमीत उत्वः। एक अपनी बातों को पुष्ट करता है, एक यज्ञ की निश्चित मात्रा को कार्य्य में ठीक उसी प्रकार परिणत करता है सो इनका नाम है अध्वर्य्यु जी।

अब यह आगे जो उद्गाता जी हैं इनका भी परिचय देना आवश्यक है। भाई इनकी मस्ती की बात न पूछो, गाते हैं, स्वयं गाते हैं सब से गवाते हैं। गाते क्या हैं इनका अङ्ग अङ्ग गाता है। संस्कृत भाषा में शरीर के अङ्गों को गात्र कहते हैं सो क्यों कहते हैं इन्हें देखने पर ही समझ में आता है। खूब पेट भर खाते हैं, भला खाएँ नहीं तो गाएँ कैसे, भूखे भजन न होई गोपाला। फिर डंड भी खूब पेलते हैं नहीं तो बदहज़मी की मार

पड़ी रहे फिर भला गावें कैसे। फिर तो वैद्य जी के द्वार पर रोया करें परन्तु यह तो गाते हैं। किन्तु इनका काम केवल गाना नहीं। यह गाता नहीं उद्गाता हैं। यह उद् इनके साथ इसीलिए जोड़ा गया है कि इनके साथ सब मिल कर गावें। जिससे इतना ऊँचा गाना उठे कि वह गगनचुम्बी हो जाय। इन्हें निरे गवैय्या न समझ लेना, यह रोना भी ग़ज़ब का जानते हैं, यजमान से लेकर छोटे से छोटे श्रमजीवी तक कोई रोया तो वह साथ रोयें, तब तक रोयेंगे जब तक वह गाने न लगे यह इस यज्ञ रूपी मशीन के तेल हैं। अगर यह न बोलें तो मशीन बोलने लगे और थोड़े दिनों में बोलने लायक भी न रहे किन्तु इनके बोलने के कारण मशीन चुपचाप बिना आवाज़ दिये चलती है। आजकल के यज्ञों में जहाँ कहीं पूँजीपतियों और श्रम जीवियों की मशीन चूँ चू करती है वहाँ या तो उद्गाता है नहीं या है तो नहीं के बराबर हैं। उद्गाता के बिना यज्ञ क्या ? इसीलिए कहा गायत्रं-त्वोगायाते शक्करीषु।

अब आगे चलिये यह ब्रह्माजी बैठे हैं। होताजी भविष्य-काल के देवता हैं। अध्वर्य्यु उद्गाता वर्तमानकाल के। होताजी कहते थे यह होगा वह होगा। अध्वर्य्यु उद्गाता कहते थे यों करो, यहाँ बिगड़ा है, यों चलाओ, यों खाओ, यों हँसो, यों गाओ। अब ब्रह्माजी भूतकाल के अधिष्ठाता हैं। इन्हें भूत प्रेतों का अधिष्ठाता न समझ लेना। यह देखते हैं कि काम में भूल कहाँ हुई। सारे कारखाने का रत्ती रत्ती भेद इन्हें पता है। क्योंकि कोई

सोचता है, कोई दौड़ता है, कोई गाता है किन्तु यह मौन होकर बैठते हैं और देखा करते हैं। याद रखना देखते हैं सोते नहीं यह बोलते भी हैं। बोलते बहुत कम हैं पर जब बोलते हैं तो वज्र गिराते हैं। इन्हें यज्ञ की लाल झंडी कह सकते हैं। आप अपना काम ठीक ठीक किये जाइये और यह अपने मौन की मोहर लगाते जावेंगे किन्तु आपने ज़रासी भूल की और यह बोले। ठहरो यहाँ भूल हुई। सारी गाड़ी खड़ी हो गई, भूल ठीक की गई इन्होंने गाड़ी को हरी झंडी दिखाई और फिर मौन फिर चुप चाप। भला होता जी तो ठहरे मस्तराम उन्हें अपनी स्कीम में कभी दोष दीख सकता है। अध्वर्यु भी जो कर बैठे सो कर बैठे। अपने किये पर थोड़ा न थोड़ा पक्षपात बड़े बड़ों को भी हो जाय तो आश्चर्य नहीं इस लिए ब्रह्माजी का आसन भी होना आवश्यक है। देखिये न यह चुपचाप बैठते हैं फिर भी यज्ञ में सब से बड़े कहलाते हैं। इन्हीं के लिए कहा ब्रह्मात्वोवदति जातविद्याम्।

अब आगे जो यह वात्सल्य की सुकुमार पवित्र मूर्ति है यह यज्ञपत्नी है। यह अमृत का आसन हैं। यजमान के सारे सङ्कल्प यजमान तक ही रह जावें किन्तु जब यह यजमान की गोद में एक हँसता खेलता पुत्र लाकर रख देती है तो यजमान का सङ्कल्प अमर हो जाता है। ऐ जूते, कपड़े, कुर्सी, ऊखल मूसल, थाली, पतीला आदि के कारख़ानों में काम करने वालो तुम जो जूते, कपड़े, कुर्सी और थालियाँ बना कर अकड़ रहे हो हमने चमड़े में जान डाल दी, कपड़े में जान डाल दी, लकड़ी में

जान डाल दी, पीतल में जान डाल दी, जाओ अपनी माता के चरणों में सिर रख कर आशीर्वाद मांगो तुमने तो चमड़े, कपड़े, लकड़ी, पीतल में कहने कहने को जान डाली है परन्तु उस वात्सल्यमयी जननी ने तो सचमुच तुम्हारे अन्दर जान डाली है। सिर्फ़ जान डाली नहीं, जान पाली भी है और किन कष्टों से पाली है। आओ इस अदिति को नमस्कार करें।

अन्त में यह मंत्र का प्रसाद लीजिये:—

ऋचांत्वः पोषमास्ते पुपुष्वान् गायत्रंत्वोगायति शक्करीषु।
ब्रह्मात्वो वदतिजात विद्यां यज्ञस्य मात्रां विमिमीत उत्वः॥

———

अशरणशरण शान्ति का धाम।
एक सहारा तेरा नाम॥

आर्य समाज के नियम

१—सब सत्य विद्या और जो पदार्थ विद्या से जाने जाते हैं उन सबका आदि मूल परमेश्वर है।

२—ईश्वर सच्चिदानन्दस्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र और सृष्टिकर्ता है। उसी की उपासना करनी योग्य है।

३—वेद सब सत्य विद्याओं की पुस्तक है। वेद का पढ़ना-पढ़ाना और सुनना-सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है।

४—सत्य के ग्रहण करने और असत्य के छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिये।

५—सब काम धर्मानुसार अर्थात् सत्य और असत्य को विचार कर करने चाहियें।

६—संसार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्देश्य है अर्थात् शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना।

७—सबसे प्रीतिपूर्वक धर्मानुसार यथायोग्य बर्तना चाहिये।

८—अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करनी चाहिये।

९—प्रत्येक को अपनी ही उन्नति से संतुष्ट न रहना चाहिये, किन्तु सबकी उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिये।

१०—सब मनुष्यों को सामाजिक सर्वहितकारी नियम पालने में परतंत्र रहना चाहिये और प्रत्येक हितकारी नियम में सब स्वतंत्र रहें।

मुद्रक—एस० एन० टण्डन, सिटी प्रेस, मेस्टन रोड, कानपुर

